मनोरंजन के नये आयाम और जनमाध्यम

राममोहन पाठक*

जिड्डू कृष्णमूर्ति सामने हैं। उनका सौम्य रुप, शांत - दीप मुखमण्डल - एक तत्वान्वेशी विचारक का मूर्तरुप! उत्सुक जिज्ञासु श्रोता जिनमें काशी - वाराणसी के अल्पवय (टीन एज) के बच्चे - बच्चियों की अच्छी खासी तादाद है। मुझ जैसे कुछ और लोग भी हैं जो जे. कृष्णमूर्ति के श्रोता - पाठक हैं। सुई पात भान्ति (पिन ड्राप साइलेन्स) के मध्य उनकी विचारवाणी प्रस्फुटित होती है - 'आपने पूछा सौन्दर्य क्या है?' रंजन और रंजक क्या है? उत्तर साफ है - जिसे बार-बार देखने, अनुभूत करने को जी चाहे, जो मानव जीवन के लिए सार्थक और उपयोगी हो, वही सौन्दर्य है। इसी सौन्दर्य में 'रंजन' या मानव मन के रंजन का तत्व निहित है।--- हमारी संस्कृति में जीवन के मूल तत्वों में मनोरंजन भी निहित है को 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' के रुप में समाहित किया गया। जो जीवन जगत के लिए कल्याणकारी और सुन्दर हो, वही मनोरंजन का अभीष्ट हो सकता है। ------। सौन्दर्य और मनोरंजन की इस सैद्धान्तिक व्याख्या का मूल स्वर शाश्वत है पर वैश्विक स्तर पर जनमाध्यमों ने इस अवधारणा को परिवर्तित करने में ऐतिहासिक भूमिका निभाई है।

मनोरंजन की भारतीय अवधारणा मूल्य - आधारित है। जिस स्थायी भाव की निष्पत्ति साहित्य या मंचीय कलाओं के संदर्भ में भरतमुनि जैसे सिद्धान्तकारों ने की, उस स्थायी भाव का मनोरंजन और खासकर जनमाध्यमों के मनोरंजन में लोप मूल चिन्ता का विषय होना चाहिए। जनमाध्यमों की 'मीडिया - मैजिक मल्टीप्लायर' शक्ति को चुनौती आसान नहीं, संभव भी नहीं किन्तु मीडिया को इस 'विस्तार' ने और जनमाध्यमों के संदेशों के वैश्विक महाविस्तार ने मीडिया को मानवीय जीवन की महाशक्ति के रूप में स्थापित कर दिया है। कल का 'बुद्धू का बक्सा' (इडियट बॉक्स, चंद पन्नों में सिमटी अखबारी अस्तित्व वाली सूचनाएं और विचार जिनका लोप होना भी चिन्तनीय मुद्दा बन गया है) सिमट रहे हैं। मनोरंजन के आगोश में पूरा का पूरा मीडिया परिदृश्य सिमटने को आतुर है। खबरों और सूचनाओं का मनोरंजनीकरण, समाचारों का समाचार स्टोरी तथा समाचारों का नाटकीयकरण (ड्रामेट्राइजेशन) बनाना मीडिया पर मनोरंजन के तत्व के विश्वव्यापी प्रभाव का द्योतक है।

भगवान श्री कृष्ण के 'महारास'- को 'महामनोरंजन' की संज्ञा दी गई-

'भगवनापि ता रात्री
भरदोत्फुल्ल मल्लिका।
वीक्ष्यरन्तुं मनश्चक्रे,
परमानंद माधवम्।'

यह 'परमानंद' ही मनोरंजन का सर्वार्थ या अभीष्ट रहा है। पारंपरिक मनोरंजन का यही मूल तत्व रहा है। लोकप्रियता का मानक यह था कि 'महारास' में गोपियां - ब्रज बालाएं - सभी संगीत (कृष्ण की बांसुरी) के रंजक सुरों से खिंची चली आती थीं। सभी कृष्णमय हो जाती थीं। आगे चलकर थियेटर विकसित हुए। बंद होते लोकप्रिय पारसी थियेटरों की जगह फिल्में आईं। मूक, सवाक, व्यावसायिक, समान्तर और दूसरे तरह की फिल्में - मनोरंजन उनका उद्देश्य था। टेलीविजन और फिल्मों में विषयवस्तु के स्तर पर 'कन्वर्जेन्स' नई प्रवृत्ति बन गयी। टीवी पर कठपुतली, रामायण, महाभारत, पौराणिक फिल्में, सामाजिक, ऐतिहासिक फिल्में सभी ने मनोरंजन को नये आयाम दिये पर 'तक और कमाई' संदेश पर हावी होती गई। इसी कमाई ने फिल्मों के रीमेक और टीवी धारावाहिकों को नये तथ्य प्रदान किये।

भारतीय मनीषियों ने रस शास्त्र की मान्यताओं के अनुसार मनोरंजन के मूल अर्थात् 'रस' को 'रसो वै सः' कहा। इस सूत्र - सिद्धान्त वाक्य में 'सः' की व्युत्पति और संकल्पना आदि काल से ऋषियों-मुनियों और तत्व चिन्तकों की जिज्ञासा का अनन्त बिन्दु रही है। इस 'सः' को सृष्टिकर्ता ईश्वर की अनन्त शक्ति का प्रतिरुप तत्व माना गया। व्याख्या की गई - सृष्टिकर्ता का अभीष्ट सृष्टि का सकारात्मक रस - अभिसिंचन ही हो सकता है। अतः जो सृष्टि के हित में है, सर्व कल्याणबोधक तत्व है, वही रस या मनोरंजन का मूल हो सकता है, होना चाहिए।

***पूर्व निदेशक महामना मदन मोहन मालवीय हिन्दी पत्रकारिता संस्थान महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी**

भद्रलोक भी भद्रजन के मनोरंजन को आम लोगों तक पहुंचाने के क्रम में पौराणिक काल के 'महारास' और 'स्वयंवर' की आधुनिक मीडिया द्वारा नये रुप में प्रस्तुति मनोरंजन के नये आयाम स्थापित करती है। प्रभावशाली फार्मेट, रंगीन प्रस्तुति, लाखों - करोड़ों तक पहुँच और प्रभाव वाले जनमाध्यमों ने 'सास-बहू, डांस शो, बिग ब्रदर' जैसे सीरियलों और रियेलिटी शो के माध्यम से अपने ही नहीं श्रोता दर्शकों के नये मनोरंजन संसार की सृष्टि की है। फ्लर्ट, धोखा, आंसू, आरोप- आत्यारोप, मेलोड्रामा के जरिये बनावटी 'रियेलिटी' का सौदागर बनता जा रहा मीडिया और लोगों को जीवन की वास्तविकताओं से दूर 'स्वप्नलोक' में ले जाने में कामयाब हो गया है। भारतीय समाज पर विघटनकारी प्रभावों के लिए इसे उत्तरदायी मानते हुए भी इसका बेधड़क प्रसारण जारी है। इसकी यह कामयाबी भारतीय जीवन मूल्यों के लिए बहुत बड़ी चुनौती है।

मनोरंजन की भारतीय और पाश्चात्य अवधारणा में मूल अंतर मूल्यों का अंतर है। 'बाजार' आधारित पश्चिमी मीडिया सूचना और मनोरंजन पर केन्द्रित है। जबकि भारतीय मीडिया पारम्परिक रूप से सूचना के साथ शिक्षा, जन जागरण और इसके साथ ही भारतीय समाज की मूल्य व्यवस्था (वैल्यू सिस्टम) पर आधारित मनोरंजन की प्रसारक शक्ति थी, जिसकी साख ही उसकी मूल शक्ति थी। मनोरंजन प्रक्रिया पीढ़ी दर पीढ़ी भारतीय समाज में मूल्यों की जीवन में महत्वपूर्ण संवाहक प्रक्रिया के रूप में मान्य है।

पारम्परिक रुप से प्रचलित संदेशों के प्रसारक मीडिया की अन्तर्वस्तु के संदर्भ में मूल्यानुगत (वैल्यूबेस्ड) चयन प्रक्रिया या पद्धति आारंभिक काल से चली आ रही है। जीवनक्रम, जीवन पद्धति में आये बदलावों के साथ मैजिक मल्टीप्लयर की भूमिका में 20वीं शताब्दी में बड़े परिवर्तन आये। 'सत्य' या मीडिया की चलती हुई भाषा में कहें 'सत्य' पर आधारित अंतर्वस्तु के प्रसारण के रुप में मीडिया को 'जिन्दगी का आईना' बनाने में लगे मीडिया घरानों ने संपूर्ण मीडिया अंतर्वस्तु को सिर्फ 'बिकाऊ माल' बनाने की विश्वव्यापी होड़ छेड़ दी। सूचना और शिक्षापरक अंतर्वस्तु इसी होड़ की शिकार हुई। सूचनाओं का बाजारीकरण करते हुए 'बिकाऊ समाचार' की जरुरत समझी गई। समाचार की जगह 'समाचार स्टोरी' ने ले ली। शिक्षापरक अंतर्वस्तु का प्रतिशत तो गिरा ही पर शिक्षा की अंतर्वस्तु का प्रायः लोप होने लगा। इसका स्थान 'इंटरटेनिंग एजुकेशन कन्टेन्ट' ने ले लिया। मीडिया की इन प्रवृत्तियों का मूल स्वर था - मनोरंजन। पहला तत्व मनोरंजन फिर सूचना या शिक्षा - बहुत आवश्यक हुई तो। मीडिया अंतर्वस्तु के इसे 'मनोरंजनीकरण' की दौड़ में भारतीय मीडिया भी शामिल हुआ। इसी प्रवृत्ति की ओर संकेत करते हुए स्वनामधन्य पत्रकार स्वर्गीय बाबूराव विष्णु पराड़कर ने लिखा -

''---- पत्र सर्वांग सुन्दर होंगे, आकार बड़े होंगे, छपाई अच्छी होगी, मनोहर, मनोरंजक और ज्ञानवर्धक चित्रों से सुसज्जित होंगे, लेखों में विविधता होगी, काल्पनिकता होगी, गंम्भीर गवेषणा की झलक होगी और मनोहारिणी शक्ति भी होगी, ग्राहकों की संख्या लाखों में होगी, यह सब कुछ होगा, पर पत्र प्राणहीन होंगे, पत्रों की नीति देशभक्त, धर्मप्राण अथवा मानवता के उपासक महाप्राण सम्पादकों की नीति न होगी, इन गुणों से सम्पन्न लेखक विकृत मस्तिष्क समझे जायेंगे।'' ------ ''समाज के जीवन में जिन प्रश्नों पर उचित निर्णय की आवश्यकता होती है और जिन निर्णयों पर समाज का जीवन अन्त में निर्भर रहता है, उनके बारे में जनता को योग्य जानकारी करना, उनके संबंध में जनमत का निर्माण और नेतृत्व करना उस मत को प्रकट करना तथा उससे अधिक से अधिक लाभ जनता को पहुँचाना एक आदर्श पत्रकार का कर्तव्य है।''

माँ की लोरी का संगीत सुनते हुए निद्रा की ओर प्रवाहित बाल-शिशु मन की तरंगें और अभिमन्यु का अपनी माता सुभद्रा के गर्भ में अपने पिता द्वारा युद्ध कौशल का वर्णन सुनना अब गये जमाने की स्मृतियाँ बन चुके हैं। गर्भस्थ शिशु तक संचार की पहुँच की आस्था विश्वास वाले भारत में यदि सुभद्रा को नींद न आती तो महाभारत और अभिमन्यु के लिए चक्रव्यूह के सातवें दरवाजे का तिलिस्म अज्ञात नहीं रह जाता। महाभारत का अंत कुछ और ही होता।

किन्तु वर्तमान घरों में या मानव मस्तिष्क में पैठ बना चुके जनमाध्यमों को भारतीय परम्परा के 'महारास' के मनोरंजन, रामलीलाओं, जात्रा या तमाशा, मेलों - ठेलों की परम्पराओं की कोई परवाह नहीं। उनके लिए ये सब गये दिनों का मनोरंजन रहा होगा। बच्चा - बच्ची लोरी सुनकर या बोधकथाएं या 'एक था राजा एक थी रानी' की बहुत कुछ वास्तविक और कुछ - कुछ काल्पनिक कहानियाँ सुनकर नहीं सोता। हर बच्चे को अलग टीवी चाहिए। रात में माता - पिता उनके कमरों में प्रवेश करने में हिचकते हैं। उनका मनोरंजन कभी विदेशी टीवी के कार्यक्रम होते हैं या अखबारों और खास - खास पत्रिकाओं के खास अंक होते हैं। वर्ल्डवाइड रेसलिंग (कुश्ती) के दाँव, फैशन शो और रियेलिटी शो की 'रियेलिटी' वे भले ही न समझ पाते हों, फिर भी

उसे तत्कालिक और क्षणिक मनोरंजन के लिए देखेंगे जरुर - देखते ही रहेंगे। देखते - देखते सो जाना उनकी आदत और नियति बन चुकी है। मनोरंजन के जरिये मूल्यों का बोध कराने वाली कहानियाँ, गीत और लोरी सुनाने वाली माँ, दादी, दादा या नानी, नाना की जगह तो इडियट बक्से ने ले ली है। खास - खास पत्रिकाओं के खास - खास अंक मोहक अदाओं वाले मनोरजककर्ताओ ंकी शील, अश्लील तस्वीरें आज के लल्ला - लल्लियों के स्टडी रुम की ज्यादा से ज्यादा जगह घेर चुकी है। नयी पीढ़ी के लिए शायद देखना ही मनोरंजन है। मीडिया ने पढ़ने, गुनने और सोचने की प्रवृत्ति से नयी पीढ़ी को दूर पहुँचा दिया है।

आज जनमाध्यमों के लिए लोकप्रियता व्यावसायिक सफलता का दूसरा नाम है। प्रिन्ट माध्यमों में आभिजात्य वर्ग के मनोरंजन की पेज - थ्री अंतर्वस्तु, एफ.एम. रेडियो की नितान्त तात्कालिक संदर्भो वाली बाजारू और अप्रासंगिक भाषा सभी ने मनोरंजन को ही केन्द्र में रखा है। 'संदेश' बनाम 'मनोरंजन' के इस शीत या छद्मयुद्ध में मनोरंजन लगातार विजयी होता जा रहा है। लोकप्रियता और व्यावसायिक सफलता दोनों का आधार मनोरंजन बनता जा रहा है। यह चिन्तनीय होना चाहिए।

'पाठक - श्रोता दर्शक की अभिरुचि को भांपने की तकनीक पर प्रहार होते रहे हैं पर यही टी.आर.पी. तत्व आज मीडिया का नियामक बन चुका है। संसद की सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी स्थायी समिति की मानें तो भारत में 17, 18 साल पुरानी यह टी.आर.पी. पद्धति भी दोषपूर्ण है। तथ्य चौंकाने वाले है। मनोरंजन परोसने वाले प्रसारकों, टीवी चैनलों में विज्ञापन प्रदाता एजेंसियों और विज्ञापनकर्ताओं के हित को सर्वोपरि रखा गया है। 115 करोड़ लागों के भारत वर्ष में सिर्फ 125 करोड़ घरों तक ही टीवी पहुँचा है। फिर बिजली, रहने के स्थान की कमी, जीविका के कारण समय के अभाव आदि कारणों से टीवी का कम से कम उपयोग (या देखा जाना) भी एक महत्वपूर्ण स्थिति है। इसके बावजूद 102 करोड़ से ज्यादा लोग टीवी से अभी भी बहुत दूर हैं। 148 शहरों के सात हजार से कुछ ज्यादा घरों में मीटर लगाकर टी.आर.पी. मापने वाली व्यावसायिक संस्था दावा करती है - 'राखी का स्वयंवर' या 'कौन बनेगा करोड़पति' की टी.आर.पी. सबसे ऊपर है। विज्ञापन के लिये ये सूखे, लुभावने आंकड़े पाठक - श्रोता दर्शकों के मूल्यों से कितना सरोकार रखते हैं। यह प्रश्न टी.आर.पी. के समक्ष हमेशा चुनौती रहा है पर टी.आर.पी. की इसी कारगुजारी की बदौलत अनेक चैनल फल फूल रहे हैं। फिर भी यह चौंकाने वाला तथ्य है कि देश के तीन सौ - सवा तीन सौ चैनलों में से कोई 20 चैनल ही, जिनमें अधिकांश मनोरंजन और सनसनी परोसने वाले चैनल हैं, व्यावसायिक दृष्टि से सफल है। बाकी सब जैसे - तैसे चल रहे हैं। इनमें कई अकालमृत्यु के मुहाने पर खड़े हैं। अनेक तो भूत में कालकवलित हो भी चुके हैं। इस टी.आर.पी. के खेल से देश के दूर-दराज की 70 करोड़ जनता का कुछ भी लेना-देना नहीं है। उनके मनोरंजन और उनकी सूचना शिक्षा संबंधी जरुरतें कौन पूरी करेगा? यह प्रश्न भारतीय लोकतंत्र के मीडिया का चिरन्तन प्रश्न बन चुका है। आंकड़ों के अनुसार एक लाख से ज्यादा आबादी वाले कुल 235 शहरों में टेलीविभाग के यहाँ स्थापित यंत्रों के माध्यम से प्राप्त जानकारी के द्वारा ही यह निर्धारित किया जा रहा है कि भारत के दर्शक क्या देखते हैं? क्या देखना चाहते हैं? प्राइम टाइम की विषयवस्तु क्या होगी और अन्ततः यह निष्कर्ष पा लिया जाता है कि अधिकतम लोगों की पहली और प्रमुख पसंद है - सिर्फ मनोरंजन और थोड़ी बहुत सूचना।

मात्र मनोरंजन या भावनात्मक उत्तेजना के लिए प्रकाशित या प्रसारित मीडिया सामग्री या अन्तर्वस्तु को साहित्य की भाषा में 'घासलेटी साहित्य' की तरह घासलेटी या निष्प्रयोज्य माना जाता रहा है। क्योंकि प्रत्येक प्रकाशित या प्रसारित विषयवस्तु का अलग-अलग उद्देश्य और प्रभाव हो सकता है। कुछ न कुछ प्रभाव तो होगा ही।

जन माध्यम सूचना शिक्षा के बजाय मनोरंजन केन्द्रित अधिक हो गये हैं। इसके पीछे पाठक श्रोता-दर्शक की अभिरूचि और लोकप्रियता को कारक मानकर समस्त मीडिया अंतर्वस्तु का नियोजन मूल प्रवृत्ति बन चुका है। जो कुछ बिकाऊ है, जो चलता है, जो गंदा है, फिर भी धंधा है, उसे दिखाओ बताओ और अपने माध्यम के अस्तित्व को बनाये रखो। सर्वाइवल या अस्तित्व के संकट से जूझते मीडिया की बहुलता के इस युग में 24 गुणे 7 की आवश्यकताएं और प्राथमिकताएं बदल गई हैं। विज्ञापन या कामर्शियल ब्रेक से बचे स्थान या खाली समय खण्ड को रोज-बरोज भरने की चुनौती से रूबरू भारतीय मीडिया के लिए मनोरंजन सार्थक बिकाऊ माल बन गया है। लेकिन स्वस्थ लोकप्रियता मनोरंजन के मानक क्या हों? यह प्रश्न चिरंतन बन चुका है।